International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 29-01-2022, Accepted: 10-02-2022, Published: 27-02-2022
Volume 8, Issue 1, 2022, Page No. 49-51

वर्तमान परिदृश्य में आचार्य विनोबा भावे के विचारों की प्रासंगिकता

अनिल कुमार सैनी
सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, बिथ्याणी, यमकेश्वर (पौड़ी गढ़वाल), उत्तराखण्ड, भारत

सारांश
आचार्य विनोबा भावे का आगमन ऐसे समय में हुआ जब हमारा देश ब्रिटिश दासता के अधीन आहें भर रहा था तथा भारतीय चिन्तन रुक सा गया था। सम्पूर्ण समाज में शोषण एवं अराजकता का वातावरण छाया हुआ था। समाज में भोगवादी अपसंस्कृति घर कर गई थी। सम्पूर्ण देश में अंग्रेजी शिक्षा का बीज बोया जा रहा था। लार्ड मैकाले द्वारा हमारी संस्कृति एवं साहित्य का उपहास उड़ाया जा रहा था।
वस्तुतः जो ऋषि है, विचारक है, युग पुरुष है उनके प्रत्येक कार्य युग की आवश्यकता के तथा जमाने की माँग के अनुकूल होते हैं। विनोबा जी द्वारा शुरू किया गया भू–दान, सम्पत्ति दान, ग्रामदान, श्रमदान आदि यज्ञ आज भी हमारे जमाने की सबसे बड़ी समस्याओं के लिए एक महान चुनौती है। जो क्रान्ति की भावना रखते हैं, क्रान्ति के मार्ग पर निरन्तर बढ़ते चलना चाहते हैं। थक कर या निराश होकर बैठे रहना नहीं चाहते हैं, उनके लिए इस क्रान्ति के अग्रदूत के पद चिन्हों पर चलने की तथा उनके द्वारा बताये गये कार्यों को आगे बढ़ाने की आज भी आवश्यकता है। जो लोग मानते हैं कि कौतुक का युग नहीं रहा उनके लिए विनोबा जी का कार्य एक चुनौती के रूप में मौजूद है।

मूल शब्दः राष्ट्रीय एकता, राज्य विहीन एवं वर्गहीन समाज, अहिंसावाद।

प्रस्तावना
आज देश में प्रान्तीयता, भाषावाद, सम्प्रदायिकता जैसी बुराईयाँ पल्लवित हो रही है; राष्ट्रीय एकता खतरे में है। सर्वत्र अहिंसा की ज्वाला भड़क रही है तथा प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार व्याप्त है और वर्तमान मानव समाज में शाश्वत मूल्यों सत्य, शिव, सुन्दर की रक्षा करना कठिन होता जा रहा है। नैतिक मूल्यों का पतन होता जा रहा है। विश्व मानव समाज के सम्मुख शक्ति सन्तुलन के भंग होने के कारण युद्ध की समस्त सम्भावनाएँ दृष्टिगोचर हो रही है। पृथ्वी को जो वरदान प्राप्त थे वे आज ईर्ष्या, अहंकार, लोभ, मूढता और स्वार्थ के कारण अभिशाप में परिणत हो गए है इस प्रकार की परिस्थितियों में मानव को या तो परिवर्तन के लिए प्रस्तुत रहना होगा या विनाश का संकट मोल लेना होगा।
ऐसी परिस्थितियों एवम् प्रवृतियों के निराकरण में आचार्य विनोबा जी के दर्शन की महती उपयोगिता तथा आवश्यकता है। इनका दर्शन ऐसे मानव के निर्माण का उद्देश्य लेकर प्रवृत्त होता है, जिसमें मनुष्य में उदारता सहिष्णुता तथा सौजन्यता की पराकाष्ठा का विकास करना होता है। आज समस्त विश्व में मानव जाति की एकता के सूत्र में बाँधने के लिए विनोबा जी के दर्शन की उपादेयता है।

आचार्य विनोबा भावे के विभिन्न विचार
विनोबा जी भूदान, ग्रामदान, सम्पत्ति दान, जीवनदान, श्रमदान आदि यज्ञों के माध्यम से शिक्षा को समाज के विकास तथा संस्कृति को अक्षुण्य रखने के लिए आवश्यक मानते हैं। विनोबा जी द्वारा प्रतिपादित सर्वोदय दर्शन महात्मा गाँधी के आदर्शों पर आधारित है। सर्वोदय की विचारधारा को पहले–पहल महात्मा गाँधी ने ही सार्वजनिक किया था तथा विनोबा जी ने ही इस दर्शन को एक नया परिप्रेक्ष्य देकर आन्दोलन के रूप में विकसित किया। अहिंसा एवम् सत्य के आधार पर स्थापित वर्ग–विहीन जाति–विहीन एवम् शोषण–विहीन जैसे समाज की स्थापना, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अपनी उन्नति का पर्याप्त अवसर मिले सर्वोदय का लक्ष्य है। सर्वोदय दर्शन के अनुसार समानता भौतिक क्षेत्र तथा आध्यात्मिक क्षेत्र दोनों में ही लागू की जानी आवश्यक है। विनोबा जी का सर्वोच्च दर्शन भारतीय जीवनादर्श–
सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित् दुःख भागभवेत्।।
पर आधारित है।
विनोबा जी के अनुसार राजनीति का केन्द्र एक व्यक्ति में निहित न होकर जनशक्ति के रूप में निहित है। शासन प्रणाली का आधार जनता का विश्वास तथा सर्वकल्याण की भावना होनी चाहिए। इन्हीं आधारों के अनुरूप विनोबा जी ने शिक्षा के द्वारा निम्न राजनीतिक उद्देश्यों की सम्प्राप्ति पर बल दिया है–
1. सर्वोदय जैसे विचारों का निर्माण, तथा
2. लोकनीति में विश्वास।

विनोबा जी चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति में राष्ट्र के प्रति त्याग की भावना विकसित की जानी चाहिए जिससे राष्ट्रीय सद्भावना का विकास हो।

विनोबा जी मानते हैं कि राज्य के बिना समाज में अव्यवस्था नहीं फैलेगी, क्योंकि लोग स्वभाव से ही शान्ति–प्रिय, सभ्य, प्रेम और दयालुता के पुतले होते हैं। अतः सरकार की अनुपस्थिति में आपसी झगड़ों के कारण अलग–अलग नहीं होंगे। उनका विचार है कि इस प्रकार के झगड़े पशु–जगत् में होते हैं, मानवीय समाज में नहीं होते। अगर कोई व्यक्ति दूसरे को लूटता है तो यह आपसी झगड़े का फल नहीं कहा जा सकता, वरन् यह तो केवल अज्ञानता का ही फल होता है। अतः जब लोगों को ज्ञान होता है कि समाज तो परिवार का ही विकसित रूप है, तो इस प्रकार के झगड़े समाप्त हो जाएँगे। वास्तव में मनुष्य प्रेम के ही अधीन रहता है। उसका जन्म प्रेम से ही होता है। वह प्रेम द्वारा बढ़ता है, वह प्रेम से विकास करता है। उसे उसकी अन्तिम घड़ी में प्रेम की प्यास लगती है और जब वह प्रेम के अनुसार कार्य करता है, तो उसके मन को पूर्ण शान्ति मिलती है। विनोबा जी दयालुता के साम्राज्य की स्थापना के लिए आशावादी है, जिसमें बहुत जल्दी कोई भी व्यक्ति दूसरे पर अविश्वास नहीं करेगा।

विनोबा जी ने अपने राज्य–विहीन तथा वर्गहीन समाज की स्थापना के लिए तीन स्वतन्त्र चरणों की कल्पना की है–

1. एक स्वतन्त्र केन्द्रीय स्वराज्य,
2. विभाजित स्वराज्य; तथा
3. राज्य–मुक्ति–स्वराज्य।

राज्य–मुक्ति स्वराज्य दलीय प्रथा से मुक्त होगा। राजनीतिक दलों की कोई आवश्यकता नहीं होगी, जब गाँव बुनियादी इकाई होगा और गाँव के सब व्यक्ति एक–दूसरे को भली–भाँति जानते होंगे। अतः लोगों को कांग्रेसी, प्रजा–समाजवादी अथवा साम्यवादी कहने की जरूरत नहीं होगी।[1]

विनोबा जी का विचार है कि चाहे गाँव प्रभुसत्ताधारी होंगे फिर भी उन समस्याओं के समाधान हेतु जिनका सम्बन्ध एक से अधिक गाँव के साथ है; एक थाना या तालुका पंचायत को सर्वसम्मति से नियुक्त किया जाएगा। यह थाना या तालुका पंचायत भी निर्णय करते समय सर्वसम्मति के नियम का पालन करेंगी। थाना या तालुका–पंचायत तथा जिला–पंचायत की समस्याओं से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान के लिए जिला–पंचायतों का गठन किया जाएगा। इसके बाद प्रान्तीय पंचायतें आएँगी और अन्त में केन्द्रीय पंचायत आएगी। अतः विनोबा भावे ने स्वयं ये अनुमान लगाकर तीन श्रेणियों वाली पंचायत–प्रणाली की परिकल्पना की है, कि जिन मामलों का फैसला उपर्युक्त पंचायत करेगी, उनका सम्बन्ध गाँव के दैनिक जीवन के साथ होगा और इस प्रकार का ढाँचा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में बाधक नहीं बनेगा। उन्होंने इस तीन श्रेणियों वाली प्रणाली का मुकाबला उस धागे से किया है जो माला के फूलों को आपस में मिलाता है। बढ़िया माला वही होती है, जिसमें केवल फूल–ही–फूल नजर आएँ, धागा दिखाई न दे। इसी तरह एक आदर्श समाज में प्रशासन अदृश्य होगा।[2] विनोबा जी महत्वहीन मामलों में ऊपर के स्तर पर सर्वसम्मति से तनिक हट जाने को स्वीकार करते हैं, परन्तु महत्वपूर्ण मामलों में वे सर्वसम्मति के पक्ष में हैं।

क्या उनकी कल्पना वाले अहिंसावादी समाज की समस्याएँ केन्द्रीय पंचायत की रचना से अन्तर–प्रान्तीय समस्याओं से टकराएँगी नहीं? विनोबा जी को इस प्रकार का कोई भय नहीं, क्योंकि उनके विचारानुसार, "केन्द्र कभी–कभी ही इन शक्तियों का प्रयोग करेगा। धीरे–धीरे समाज की नैतिक उन्नति के साथ–साथ, केन्द्र इन नाममात्र की शक्तियों का प्रयोग करना भी बन्द कर देगा और उसका कार्य केवल एक मन्त्रणा देने वाली संस्था का सा ही रह जाएगा। पूर्ण रूप से नैतिक दृष्टि तक विकसित समाज में केन्द्र लगभग महत्वहीन ही हो जाएगा। हो सकता है, वह कभी–कभी नैतिक शक्ति का प्रयोग भी करे। इस प्रकार का समाज उस समय शिखर पर पहुँचेगा, जब सारी भौतिक शक्ति गाँव के पास होगी और नैतिक शक्ति का प्रयोग केन्द्र वाले लोग करेंगे।"[3] अतः उनके निकटस्थ लक्ष्य का वर्णन 'शासन निरपेक्ष राज्य' से किया जा सकता है, जिसमें अस्तित्वहीन प्रकार का प्रशासन होता है और जिसकी उपस्थिति को महसूस नहीं किया जाएगा।

समाज के साधारण दैनिक जीवन का निर्माण 'जनशक्ति' के आधार पर किया जाएगा। इस मध्यवर्ती अवस्था के लिए भी तीन श्रेणियों वाली व्यवस्था की जरूरत होगी, जो कि कुछ समय के पश्चात् लोप हो जाएगी, जब शासन–मुक्त समाज का उदय होगा। उनके शब्दों में, "जैसे–जैसे लोक–शक्ति, क्षमता तथा ज्ञान बढ़ेगा, आपसी सहायता का तत्व उसी अनुपात में बढ़ेगा और सरकार की आवश्यकता कम रहेगी। तब सरकार आदेश देने वाली नहीं रहेगी और केवल मन्त्रणा देने तक ही अपने आपको सन्तुष्ट रखेगी। इस तरीके से जैसे ही समाज की नैतिकता का विकास होगा, प्रशासन की जरूरत कम होगी और अन्त में, मैं आशा करता हूँ कि प्रशासन अपने–आप ही लोप हो जाएगा।"[4]

विनोबा जी मानते हैं कि आर्थिक दृष्टि से अहिंसावाद पर आधारित शासन–मुक्त समाज को परिवार के आदर्श पर ढाला जाएगा। सब कुछ साँझा होगा। पूर्ण रूप से सभी एक होंगे। प्रत्येक ग्राम अपने–आप में एक परिवार होगा। प्रत्येक गाँव आत्मनिर्भर होगा। वह किसी बाह्य सहायता की आशा नहीं रखेगा।

इस प्रकार का अहिंसावाद पर आधारित 'शासन–मुक्त समाज' कोई सेना नहीं रखेगा और अधिकतम मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखने का प्रयत्न करेगा। सेना बनाए रखना कायरता का कार्य है और इससे भय बना रहता है। अतः विनोबा ने भारतीय सरकार को सेना कम करने की राय दी है। इससे पाकिस्तान को भी प्रोत्साहन मिलेगा, क्योंकि उसे भारत के इरादों पर सन्देह नहीं रहेगा।

किसी भी राष्ट्र को अगर अहिंसा की सुबुद्धि प्राप्त हो जाए, तो वह अपने–आपको दूसरे राष्ट्रों से पृथक् और विरोधी न मानेगा। आसपास के राष्ट्रों के उचित हितसम्बन्धों की रक्षा की वह उतनी ही चिन्ता करेगा, जितनी की अपने राष्ट्र की। हिंसावादी कहे जाने वाली सभी–के–सभी राष्ट्र उन्मत्त नहीं होते; बल्कि यही कहना चाहिए कि राष्ट्र एक–दूसरे की स्पर्धा के कारण ही हिंसावादी बने हैं। मनुष्य को केवल हिंसा के लिए हिंसा नहीं भाती। इसलिए अगर कोई ऐसा राष्ट्र, जो अहिंसक विचार के अनुसार व्यवहार करने की इच्छा रखता और उसी के अनुरूप दुनिया से अविरोधी सम्बन्ध जोड़ने की कोशिश करता हो, तो वह आसपास के राष्ट्रों की विवेकवृत्ति जगाकर उसे गति देगा और उतने अंश में उन राष्ट्रों को अहिंसा के रास्ते पर लायेगा।[5]

वर्गविहीन तथा राज्यविहीन समाज की प्राप्ति के लक्ष्य की प्रक्रिया में शान्ति–सेना (अहिंसावादी अनुयायियों की सेना) को राज्य की सशस्त्र सेना का बिना हिचकिचाहट के मुकाबला करना होगा। विनोबा जी का विचार है कि अहिंसात्मक कष्टों

का अर्थ शत्रु पर विजय पाना और उसे और हिंसात्मक बनने से रोकना होगा। अहिंसात्मक तरीके से कष्ट को सहन करने से अत्याचारी लज्जित होगा और वह अपना अत्याचार बन्द कर देगा।

अतः उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि राज्य शक्ति के समाप्त हो जाने के पश्चात् सरकार भी समाप्त हो जाएगी। सार्वलौकिक शान्ति पर आधारित एक नए युग का आगमन होगा। नए समाज में पुलिस–शक्ति नहीं होगी, न्यायालय तथा कारागार भी नहीं होंगे। राज्य की प्रभुसत्ता के स्थान पर नैतिक सिद्धान्तों की प्रभुसत्ता होगी। जो लोकराय की अवहेलना करेंगे तथा समाज की नैतिक भावना का विरोध करेंगे, उन्हें न तो कोई शारीरिक कष्ट दिया जाएगा और न ही वे सरकारी दमन का शिकार होंगे; क्योंकि ऐसी बातें इस समाज में होगी ही नहीं। इसके स्थान पर उन्हें कुछ उच्च आत्माओं के संरक्षण (Tutelage) में रखा जाएगा। इस नए समाज में लोग अपने ही बनाए हुए नैतिक कानूनों का पालन करेंगे; अतः वे स्वशासित होंगे।

आँकड़ों के स्रोत

इस शोध पत्र हेतु द्वितीयक स्रोत यथा– प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं, पुस्तकों एवं लेखों का उपयोग किया गया है।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध–पत्र में ग्रन्थालय अध्ययन पद्धति तथा विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

उद्देश्य

1. वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य की समस्याओं का समाधान खोजना,
2. विनोबा भावे के अहिंसात्मक चिन्तन को उजागर करना;
3. विनोबा भावे के वैदिक मूल्यों से सामाजिक समस्याओं का समाधान खोजना।

निष्कर्ष

अतः कहा जा सकता है कि आचार्य विनोबा भावे के सिद्धान्त अपने आप में आदर्श है। इसमें कोई संदेह नहीं है, परन्तु जहाँ उन्हें व्यवहार में उतारने का प्रश्न आता है, वहाँ कठिनाई आती है। आधुनिक युग में आचार्य विनोबा जी की विशेषता यही कही जा सकती है कि उन्होंने अपने गुरु महात्मा गांधी के द्वारा आरम्भ कार्यों को पूर्ण करने एवं वैदिक मूल्यों को वर्तमान सामाजिक एवं शैक्षिक जीवन से व्यवहृत एवं उपयोगी बनाया। आचार्य विनोबा भावे ने व्यक्तिगत जीवन तक सीमित मूल्यों को सामाजिक जीवन तक व्यापक बनाकर जो नवीन उदाहरण प्रस्तुत किया, उसी से उनका स्थान सामान्य संतों की श्रेणी से बहुत ऊँचा हो जाता है।

हमारे वर्तमान नायक अन्धानुकरण में इस सीमा तक व्यस्त हो गए हैं कि अपनी संस्कृति और दर्शन का ही विसर्जन कर बैठे हैं। परिणामस्वरूप हमारे जीवन–रथ की गति कुण्ठित हो गयी है। भारतीय समाज को जाति–प्रथा में बदलकर वर्ण–व्यवस्था ने सवर्ण–दलित, स्पृश्य–अस्पृश्य, अग्रगामी–पश्चगामी आदि भेद–प्रभेदों ने और खोखला करना शुरु कर दिया है। भ्रष्टाचार, भुखमरी, बेरोजगारी, महँगाई और जनसंख्या विस्फोट ने आर्थिक ढाँचे को हिला दिया है। धनबल और बाहुबल प्रजातंत्र का खून चूस रहे हैं। अधिकार–लिप्सा, हिंसा, शोषण, उपभोक्तावादी संस्कृति और संचार–माध्यमों द्वारा अपसंस्कृति के हमलों ने भारतीय जीवन को लकवा ग्रस्त कर दिया है। विदेशी घुसपैठ और पड़ौसी राष्ट्र द्वारा प्रायोजित आतंकवाद ने भाषावाद, प्रान्तवाद, पृथक्क्तावाद आदि के कारण क्षत–विक्षप्त राष्ट्रीय एकता–अखण्डता को गम्भीर चुनौती दे डाली है।

इस सर्वतोमुखी पतन का कारण भारतीय संस्कृति और जीवन मूल्यों की उपेक्षा में निहित है। जिसके फलस्वरूप पाश्चात्य सभ्यता सारे समाज को निगलती चली जा रही है, इस अनिर्णित समस्याओं के समाधान के लिए ही विनोबा भावे के चिन्तन का उपयोग भारत को करना ही होगा।

आज भारत के वर्तमान राजनीतिक चित्र को बदलने के लिए शुद्ध आचरण और उन्हें अभिप्रेत नयी राजनीतिक संस्कृति तथा सिद्धान्त का आग्रह रखने वाली राजनीति की आवश्यकता है। अतः विनोबा भावे के विचारों से प्रेरणा लेकर उनके स्वप्न को साकार करने का दायित्व वर्तमान पीढ़ी का है और यह आज के युग की अनिवार्य आवश्यकता है। साथ ही स्पष्ट होता है कि वैश्वीकरण तथा भूमण्डलीकरण के दौर में विनोबा भावे के विचारों की प्रासंगिकता समाज में आज भी विद्यमान है।

संदर्भ सूची

1. विनोबाः शासन–मुक्त समाज की ओर, परंधाम प्रकाशन, पवनार, वर्धा, 1996, पृष्ठ 28।
2. विनोबाः चुनाव, परंधाम प्रकाशन, पवनार, वर्धा, 1983, पृष्ठ 51–52।
3. विनोबाः भू–दान गंगा, भाग–1, अखिल भारत सर्व–सेवा–संघ–प्रकाशन, पवनार, वर्धा, 1957, पृष्ठ 253।
4. विनोबाः लोक नीति, सर्व–सेवा–संघ–प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1998, पृष्ठ 77।
5. विनोबाः स्वराज्य–शास्त्र, सर्व–सेवा–संघ–प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 2010, पृष्ठ 52।